International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 11 Issue 7 Ser. I || July. 2022 || PP. 143-148

"धर्म एवं आध्यात्म पर विवेकानन्द के विचारों की प्रासंगिकता"

डॉ0 किशोर कुमार,
प्रोफेसर, इतिहास विभाग,
कु०मा०रा०म०स्ना० महाविद्यालय,
बादलपुर (गौतमबुद्ध नगर)

रश्मि
षोध छात्रा,
कु०मा०रा०म०स्ना० महाविद्यालय,
बादलपुर (गौतमबुद्ध नगर)

सारांशः–

प्रागैतिहासिक काल से लेकर आधुनिक काल तक मनुष्य कहीं न कहीं ऐसी प्रवृत्तियों से अग्रसर होता रहा है, जहां इसकी जिज्ञासा कभी भी एक पथ ठहरी न रही हो। उदाहरणतः– प्राचीन काल में मनुष्य ने अपनी नवीन गवेषणा के आधार पर इतिहास को एक विशिष्ट रुप में प्रस्तुत किया।

चाहे वह धर्म के परिप्रेक्ष्य में हो या अध्यात्म के संदर्भ में। प्रागैतिहासिक काल के मनुष्य ने रहस्यमयी विडम्बनाओं को अपने समीप पाया और उन्हें धीरे–धीरे अपनी परिभाषाओं में व्यक्त किया और एक मुख्य (श्रेष्ठ) बिन्दु जिसको मनुष्य ने 'ईश्वर' का नाम दिया है। प्रागैतिहासिक काल से लेकर मनुष्य आज भी इस ईश्वर की स्तुति करता रहा है और करता रहेगा। इसलिए यह कहना अतिशोक्ति नहीं होगी कि धर्म ईश्वर का ही स्वरुप है।

धर्म जीवन की अलौकिक आस्था एवं परम् सत्य को जानने की अभिप्सा है। भारतीय दर्शन परम्परा इन षड्दर्शन पर आधारित है– सांख्य, न्याय, वैशेषिक, वेदान्त, योग, मीमांसा। विवेकानन्द धर्म और आध्यात्म में वेदान्त दर्शन को स्वीकारते हैं। धर्म का उद्देश्य समाज में संतुलन बनाये रखना है। यह सन्तुलन तभी रह सकता है। जब मनुष्य प्राणिमात्र को ईश्वर की सृष्टि समझकर समानता का व्यवहार करे। उपनिषदों में भी धर्म की व्याख्या की गई है। संयम, दया और दान को धर्म कहा है। ब्राहमण ग्रन्थों में कर्मकाण्ड को ही धर्म समझा जाता था।

उत्तर वैदिक काल में आर्यों के विस्तार और उनके धार्मिक विश्वासों की जानकारी मिलती है। उपनिषद् भी इसी काल की रचनाएँ हैं। इनसे हमें आर्यों के प्राचीनतम दार्शनिक विचारों का ज्ञान होता है। जैसे कि सृष्टि की रचना किसने की? जीव क्या है? मृत्यु के उपरान्त जीव का क्या होता है? ईश्वर का स्वरुप क्या है? मनुष्य को वास्तविक सुख किस प्रकार मिल सकता है? आदि। उपनिषदों की सर्वश्रेष्ठ शिक्षा यह है कि जीवन का उद्देश्य मनुष्य की आत्मा का विश्व की आत्मा से मिलना है। उसी से मनुष्य को वास्तविक सुख मिल सकता है। इसको पराविद्या या आध्यात्मविद्या कहा गया है।

अध्यात्म का अर्थ है अपने भीतर के चेतन तत्व को जानना, मानना और दर्शन करना अर्थात् अपने आप के बारे में जानना या अत्मप्रज्ञ होना। गीता के आठवें अध्याय में अपने स्वरुप अर्थात् जीवात्मा को अध्यात्म कहा गया है। परम् स्वभावोऽध्यात्मुच्यते। इस संसार में मानव–जीवन से अधिक श्रेष्ठ अन्य कोई उपलब्धि नहीं मानी गई है। एक मात्र मानव–जीवन ही वह अवसर है, जिसमें मनुष्य जो भी चाहे वह प्राप्त कर सकता है। इसका सदुपयोग मनुष्य को कल्पवृक्ष की भांति फलीभूत होता है।

पूर्वकालीन ऋषि–मुनियों ने भी उच्च स्तरीय अध्यात्म के में सहसा छलांग नहीं लगाई, उन्होंने भी अभ्यास द्वारा पहले अपने बाह्य जीवन को ही परिष्कृत किया और तब कम–कम से उस आत्मिक जीवन में उच्च साधना के लिए पहुंचे थे। जीवन विषयक अध्यात्म हमारे गुण, कर्म, स्वभाव से सम्बन्धित है। हमें चाहिए कि हम अपने के गुणों की वृद्धि करते रहे। आध्यात्म मानवता का मेरूदण्ड है। इसके अभाव में असुखकर, अशान्ति एवं असन्तोष की ज्वालाएं को घेरे रहती है।

धर्म व आध्यात्म के इतिहास को समझने के लिए भारत के इतिहास को भी जानना अति आवश्यक हो जाता है, क्योंकि अतीत के पहलुओं से ही हम वर्तमान परिस्थिति का दर्पण देख सकते हैं। धर्म आध्यात्म विषय उतने प्रासंगिक हैं जितने प्राचीन काल में महत्वपूर्ण थे। प्राचीन धर्म से लेकर आधुनिक काल के धर्म व आध्यात्म विचारों पर स्वामी विवेकानन्द के विचारों की प्रासंगिकता है।

अतः इस पेपर में धर्म व आध्यात्म परर विवेकानन्द के विचारों की प्रासंगिकता के साथ–साथ प्राचीन काल के धर्म व आध्यात्म के बारे में चर्चा की जायेगी, जो आज भी प्रासंगिक है, जिससे यह पता चलता है कि मनुष्य ईश्वर के प्रति कितना पवित्र हृदयरुपी है।

धर्म क्या है? यह प्रश्न तब से चला आ रहा है जब से पृथ्वी पर मानव की उत्पत्ति हुई और आज भी प्रगतिशील भारत देश में यह प्रश्न प्रश्नचिन्ह बना हुआ है, जितना कि इतिहास के पन्नों में उत्कृत है। कालान्तर में यह प्रश्न फिर से उठ खड़ा हो जाता है कि धर्म क्या है? इस सृष्टि की उत्पत्ति किस प्रकार हुई। उस परमात्मा को जिसने इस सृष्टि के समस्त चर और अचर भाग का निर्माण किया। मानव की इस सृष्टि में क्या भूमिका है। इन्हीं सब प्रश्नों का समाधान करने का सब देशों के महापुरुषों ने प्रयत्न किया। उन्होंने परमात्मा और पूर्वजों के प्रति मनुष्य का क्या कर्त्तव्य है? यह भी जानने का प्रयत्न किया। सब देशों में यह आस्था बन गई कि ईश्वर ने ही इन महापुरुषों को उपर्युक्त प्रश्नों का समाधान निकालने की प्रेरणा दी है और उन्होंने अपने विचारों को प्रत्येक देश के धर्म ग्रन्थों में व्यक्त किया। सब व्यक्ति यह समझने लगे कि इन महापुरुषों ने जो सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं उनका अनुसरण करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है। ऐसा करने से ही वह इस संसार में और परलोक में सुख प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार विभिन्न देशों में धर्मों की उत्पत्ति हुई। दैवीय शक्तियों के अभिशाप से इतने भयभीत थे कि वे जन्म से मृत्यु तक प्रत्येक कार्य को धर्म ग्रन्थों में

लिखित नियमों के अनुसार करते थे। भारत में भी मध्य पाषाणयुग में पूर्वजों के प्रति कर्त्तव्य पूर्ति की धारणा से धार्मिक भावना का उदय हुआ। प्रागैतिहासिक काल में उत्खनित अवशेषों के आधार पर ही धर्म को परिभाषित किया गया है। उधर आद्य इतिहास की अगर बात की जाये तो इस समय धर्म का था? तो फिर वही उत्तर दिया जा सकता है कि जब पुरातात्विक स्त्रोतों के आधार पर सिन्धु सभ्यता की खोज 1921, 1922 में हुई तब विभिन्न प्रकार के अवशेष खोजे गये जो धर्म से सीधा सम्बन्ध रखते हैं और यही 'सिन्धु घाटी सभ्यता' की संस्कृति, धर्म आज भी कहीं न कहीं आधुनिक सभ्यता में दिखाई पड़ती है। अर्थात् वर्तमान हिन्दू धर्म में बहुत–सी बातें वही हैं जो बीज रुप में सिन्धु घाटी के निवासियों में प्रचलित थी।

ऋग्वैदिक काल में धर्म का अर्थ वस्तुओं के तत्वों को समन्वित रखने की शक्ति और क्रिया है। ऋग्वैदिक आर्यों ने विश्व में सर्वत्र एक व्यवस्था देखी इसलिए उन्होंने विश्व–व्यवस्था की कल्पना की जिसे उन्होंने ऋत कहा। डॉ० रामशरण शर्मा के अनुसार ऋत का अर्थ प्रारम्भ में एक गणचिन्ह (टोटेम) था। बाद में इसे धर्म का पर्यायवाची शब्द मान लिया गया। वास्तविकता यह है कि सम्पूर्ण वैदिक साहित्य में ऋत सत्य का पर्यायवाची शब्द है और धर्म और सत्य एक–दूसरे से जुड़े हैं। ऋत ही धर्म का ऋग्वैदिक स्वरुप अतः धर्म या ऋत का मुख्य उपदेश ऋग्वैदिक काल में समाज में व्यवस्था स्थापित करना था।

'ऋत' ही धर्म का ऋग्वैदिक स्वरुप है। धर्म का अर्थ होता है धारण करने योग्य अर्थात् जैसे– ऋग्वेद में वर्णित हुआ है– धर्म का प्रयोग विश्व को धारण करने के अर्थ में हुआ है। ऋग्वैदिक काल में धर्म या ऋत का मुख्य उद्देश्य समाज में व्यवस्था स्थापित करना था। धर्म का उद्देश्य समाज में संतुलन रखना है। यह संतुलन तभी रह सकता है जब मनुष्य प्राणि मात्र को ईश्वर की सृष्टि समझकर समानता का व्यवहार करे। उपनिषदों में भी धर्म की व्याख्या की गई है। संयम, दया और दान को धर्म कहा गया है। ब्राह्मण ग्रन्थों में कर्मकाण्ड को ही धर्म समझा जाता था। ब्राह्मण धर्म के ठेकेदार बन बैठे थे।

उपनिषदों में धर्म का अर्थ कुछ नैतिक गुणों का पालन बतलाया गया है। अहिंसा, सत्य, भौतिक, अस्तेय, ब्रहमचर्य और अपरिग्रह पांच यम हैं और शौच (पवित्रता), सन्तोष, स्वाध्याय (वैदिक साहित्य का पढ़ना) तय और ईश्वर प्राणिधान (ईश्वर की शक्ति) पांच नियम हैं और भारत में इन नैतिक नियमों के पालन को ही धर्म कहा गया है।

उपनिषदों के विचारकों ने यज्ञ आदि अनुष्ठानों को ऐसी कमजोर नौका बताया है, जिसके द्वारा मनुष्य भवसागर पार नहीं कर सकता। उन्होंने मोक्ष प्राप्ति के लिए ज्ञान मार्ग का प्रतिपादन किया है।

वेदान्त भारतीय दर्शन परम्परा इन षड़दर्शन पर आधारित है। सांख्य, न्याय, योग, वेदान्त, मीमांसा। छठी शताब्दी ई०पू० भारत के धर्म में एक क्रान्ति का युग आया। जिसे लेकर समाज में उथल–पुथल हुई और ऐसे धर्मों का जन्म हुआ जिन्होंने प्राचीन वैदिक धर्म का रुप ही बदल दिया जिनमें चार प्रमुख हैं– बौद्ध, जैन, वैष्णव और शैव धर्म। इनमें जैन और बौद्ध धर्म एक प्रकार से वैदिक धर्म के विरुद्ध थे।

वैदिक धर्म की जटिलताओं को देखते हुए समाज ने बौद्ध धर्म को अपनाया। महात्मा बुद्ध व महावीर स्वामी ने धर्म के परिप्रेक्ष्य में नवीन सिद्धान्त प्रतिपादित किये जो समाज में क्रान्ति का रुप धारण कर धर्म के नाम पर चली आ रही बुराईयों का परित्याग कर रही थी।

कौटिल्य ने भी अहिंसा, सत्य, पवित्रता, निंदा न करना, दया और क्षमा का अनुसरण करना सभी वर्णों के मनुष्यों का धर्म बतलाया है।

अशोक के अभिलेखों में भी धम्म का कोई नवीन रुप न था। उसने भी नैतिक सिद्धान्तों को धर्म में लागू किया। जो अच्छी बातें थी, जो नैतिक थी, शुद्ध आचरण था उसको ही धम्म कहा गया। उसने मास्की अभिलेख में स्वम् को 'बुद्ध शाक्य' कहा और भाब्रु अभिलेख में उसने बौद्ध धर्म के त्रिरत्न बुद्ध, धर्म और संघ में अपनी आस्था स्पष्ट रुप से प्रकट की है।

गुप्तकाल से पूर्व यूनानी, शक, पल्लव व कुषाण हिन्दू समाज में पूर्णतया घुलमिल गए थे। हूणो ने भी हिन्दू धर्म को अपना लिया। हिन्दू धर्म भारत की सीमा को पार करके जावा, सुमात्रा और बोर्नियो में प्रचलित हो गया और मैसोपोटाकिया तथा सीरिया में चौथी शताब्दी तक बहुत से हिन्दू मंदिर बन गए।

सल्तनतकाल से लेकर मुगलकाल तक के धर्म से सम्बन्धित इतिहास की अगर विवेचना की जाये तो विभिन्न आक्रन्तायें भी कुछ कम नहीं थे। भारत में प्रवेश के समय उनके एक हाथ में तलवार और दूसरे में कुरान की आयतें जो 'इस्लाम' का प्रचार व प्रसार करने में जुटे हुये थे। वह भी अपने धर्म का विस्तार करना चाहते थे।

19वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में भारत के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में एक ऐसे आन्दोलन का श्री गणेश हुआ और सम्पूर्ण भारत में एक ऐसी जाग्रति आई जिसे कुछ विद्वानों ने भारतीय पुनर्जागरण (Indian Renaissance) के नाम से पुकारा है। अंग्रेज व्यापारियों के साथ ईसाई, पादरी एवं धर्म–प्रचारक भी भारत आए थे। अंग्रेजी शासन की स्थापना के बाद उनकी गतिविधियां जोर पकड़ती गई। पहला, उनके प्रयत्नों से देश में अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार रुप जिससे पाश्चात्य ज्ञान एवं विचार भारतीयों तक पहुंचने लगे और उनमें जागरण की चिंतनधारा फूटने लगी। दूसरे जब ईसाई मिशनरियों ने भारतीयों को ईसाई बनाना शुरु किया तो इसके विरुद्ध हिन्दुओं की तीखी प्रतिक्रिया हुई और कुछ हिन्दू अपने धर्म की रक्षा के प्रयत्न में जुट गए। लेकिन वे जानते थे कि ईसाई हिन्दुओं की किन कमजोरियों का फायदा उठा रहे हैं। जात–पांत, अंधविश्वास और निरर्थक आडंबरों के परिणामस्वरुप उस समय खुद हिंदू धर्म निष्क्रिय और शक्तिहीन हो गया था तथा ईसाई धर्म को स्वीकार करने लगा था। अतः सुधारकों की दृष्टि सबसे पहले धर्म पर ही पड़ी। धार्मिक आडंबरों को चुनौती दी गई एवं धर्मों में सुधार कर उन्हें समसामयिक संदर्भ में उपयोगी एवं युक्तिसंगत बनाने का प्रयास शुरु किया।

अध्यात्म क्या है?

अध्यात्म का अर्थ स्पष्टतः आत्मा व परमात्मा से सीधा सम्बन्ध स्थापित करना होता है। भारत में नैतिक नियमों का पालन करने को ही धर्म कहा गया है। आर्यों का विश्वास था कि इन्हीं नैतिक नियमों का पालन करने से मनुष्य आध्यात्मिक उन्नति कर सकता है। वैदिक ऋषियों के अनुसार मनुष्य की आत्मा का स्वरुप पूर्णतया आध्यात्मिक है। जीवन का लक्ष्य आत्मा के उस आध्यात्मिक स्वरुप को प्राप्त करना है जिससे मनुष्य को वास्तविक सुख की प्राप्ति होती है। यह वास्तविक सुख भौतिक शरीर के बन्धनों से मुक्त होकर ही प्राप्त हो सकता है। इसी अवस्था को मोक्ष कहते हैं। किन्तु मनुष्य अपनी भौतिक इच्छाओं का अन्त नहीं कर सकता, इसलिए तत्ववेत्ताओं ने भौतिक इच्छाओं की पूर्ति की निन्दा नहीं की, क्योंकि उन्हें व्यक्तित्व विकास का आवश्यक साधन समझा। इसलिए मनुष्य को चारों पुरुषार्थों अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में समन्वय स्थापित करना चाहिए। इसलिए मनुष्य को भौतिक सुखों का उपभोग और आध्यात्मिक जीवन में समन्वय स्थापित करना था।

अर्थात् एक आत्मा का दूसरी आत्मा के साथ और प्रत्येक आत्मा का परम पिता परमात्मा के साथ जो नैतिक तथा दिव्य आध्यात्मिक सम्बन्ध है वे हमारे पता लगाने के पूर्व भी थे और हम यदि भूल भी जाएं तो भी वे बने रहेंगे। आध्यात्मिक, मूर्ति–पूजा शब्द के समान ही कई अलग मान्यताओं और पद्धतियों के लिए प्रयुक्त शब्द है, यद्यपि यह उन लोगों के साथ विश्वासों का साझा नहीं करती है जो मूर्ति–पूजक हैं अथवा अनिवार्यतः आत्मा के अस्तित्व में विश्वास या अविश्वास से निर्मित नहीं है। आध्यात्मिकता की एक सामान्य परिभाषा यह हो सकती है कि यह ईश्वरीय उद्दीपन की अनुभूति प्राप्त करने का एक दृष्टिकोण है, जो धर्म से अलग है। आध्यात्मिकता को ऐसी परिस्थितियों में अक्सर धर्म की अवधारणा के विरोध में रखा जाता है जहां धर्म को संहिताबद्ध, प्रमाणिक, कठोर, दमनकारी या स्थिर के रुप में ग्रहण किया जाता है, जबकि अध्यात्म एक विरोधी स्वर है, जो आम बोलचाल की भाषा में स्वयं आविष्कृत प्रथाओं या विश्वासों को दर्शाता है अथवा उन प्रथाओं और विश्वासों को जिन्हें बिना किसी औपचारिक निर्देशन के विकसित किया गया है। इसे एक अभौतिक वास्तविकता के अभिगम के रुप में उल्लिखित किया गया है। एक आंतरिक मार्ग जो एक व्यक्ति को उसके अस्तित्व के सार की खोज में सक्षम बनाता है, या फिर 'गहनतम मूल्य और अर्थ जिसके साथ लोग जीते हैं।' आध्यात्मिक व्यवहार, जिसमें ध्यान, प्रार्थना और चिंतन शामिल हैं, एक व्यक्ति के आंतरिक जीवन के विकास के लिए अभिप्रेत हैं, ऐसे व्यवहार अक्सर एक वृहद्ध सत्य से जुड़ने की अनुभूति में फलित होती है, जिसमें अन्य व्यक्तियों या मानव समुदाय के साथ जुड़े एक व्यापक स्व की उत्पत्ति होती है। प्रकृति या ब्रह्माण्ड के साथ आध्यात्मिकता को जीवन में अक्सर प्रेरणा अथवा दिशा–निर्देश के एक स्त्रोत के रुप में अनुभव किया जाता है। इसमें सारहीन वास्तविकताओं में विश्वास या अंतस्थ के अनुभव या संसार की ज्ञानातीन प्रकृति शामिल हो सकती है।

विवेकानन्द का धर्म एवं दर्शनः–

18वीं शताब्दी के राष्ट्रीय पतन के समय आर्थिक दरिद्रता तो आई ही साथ ही धर्म भी बुरी तरह भ्रष्ट हुआ। उस समय अंधविश्वासों और धार्मिक आडंम्बर का बोलबाला था तथा सारे देश में एक तरह का बौद्धिक दिवालियापन छाया हुआ था। अतः सुधारकों की दृष्टि सबसे पहले धर्म पर ही पड़ी। इन सुधारकों के स्वामी विवेकानन्द का नाम आदरणीय लिया जाता है, जो आध्यात्मिक जिज्ञासा से राम–कृष्ण के सम्पर्क में आये और उनसे प्रभावित होकर उनके शिष्य बन गए। विवेकानन्द ने गुरु की मृत्यु के बाद सन्यास ग्रहण कर लिया था तथा उन्होंने धार्मिक ग्रन्थों का विषद अध्ययन किया। 1893 में वे शिकागो (अमेरिका) गए, जहां उन्होंने 'पार्लियामेंट ऑफ रिलीजन' में अपना इतिहास प्रसिद्ध भाषण दिया। इन्होंने हिन्दू धर्म का प्रचार किया। लेकिन वे अन्य धर्मों का भी भलीभांति सम्मान करते थे। वे सभी धर्मों की मौलिक एकता पर विश्वास रखते थे। उन्होंने स्वदेश लौटने के बाद 1897 में राम–कृष्ण मिशन की स्थापना की। राम–कृष्ण मिशन के सिद्धान्तों का आधार वेदान्त दर्शन है। उन्होंने भारत की निर्धनता, जाति–प्रथा, अंधविश्वास, कर्मकाण्ड आदि के विरूद्ध विद्रोह कर दिया। ईश्वर के उपासक के सम्बन्ध में उनका कहना था कि– "काम के समय तुम एक हाथ से ईश्वर का पैर पकड़े रहो और दूसरे हाथ से काम करो।" उन्होंने हिन्दू धर्म की रक्षा करने के लिए युवाओं में जोश भरा। उन्हें 'तूफानी हिन्दू' भी कहा जाता है।

जवाहरलाल नेहरु कहते हैं कि– "एक बार इस हिन्दू संयासी को देख लेने के पश्चात् उसे और उसके संदेश को भुला देना मुश्किल है।"

मनुष्य का लक्ष्य ईश्वर की प्राप्ति होना चाहिए जो अध्यात्मवाद के द्वारा ही सम्भव है।

स्वामी विवेकानन्द ने वेदान्त–दर्शन की व्याख्या आधुनिक परिप्रेक्ष्य में की तथा निराशा एवं कुंठा के दल–दल में फंसी हुई भारतीय जनता को जीवन का नया पथ दिखाया। विवेकानन्द का वेदों और उपनिषदों में अटूट विश्वास था। उन्होने पूरे विश्व में वेदान्त दर्शन को सर्वजनीन, सार्वभौमिक दर्शन के रुप में प्रचारित–प्रसारित किया। स्वामी विवेकानन्द के नव्य वेदान्त दर्शन में आधुनिक वैज्ञानिक खोजों तथा समकालिक विचारों को स्थान मिला। स्वामी जी का दृढ़ विश्वास था कि देश की भौतिक उन्नति एवं सामान्य जन की समृद्धि उतनी ही आवश्यक है जितना व्यक्ति और समाज की आध्यात्मिक उन्नति। विवेकानन्द सृष्टि का कर्त्ता ब्रह्मा को ही मानते थे। वे यह भी स्वीकार करते थे कि यह वस्तु जगत ब्रह्मा की माया शक्ति के द्वारा निर्मित है, परन्तु ये माया और जगत को असत्य नहीं मानते थे, पर वे माया एवं जगत के मूल तत्व ब्रह्मा को अन्तिम सत्य मानते थे। मनुष्य जीवन का अन्तिम उद्देश्य मुक्ति है।

विवेकानन्द ने ज्ञान को दो भागों में विभाजित किया। वस्तु जगत का ज्ञान और आत्मतत्व का ज्ञान।

स्वामी विवेकानन्द का जीवन आज के समय में भी सफलता की ऊंचाई पर पहुंच कर ज्ञान ज्योति को बढ़ा रहा है। स्वामी विवेकानन्द एक महान व्यक्ति थे। जिसके लिए आज का प्रत्येक व्यक्ति ऋणी है। इन्होंने समाज और धर्म में

विभिन्न कुरीतियों को ऐसे दूर करने की कोशिश की, कि मानो किसी तालाब के सड़े हुए पानी को साफ करने के लिए किया जाता है। विवेकानन्द का मानना था कि धर्म भारत की विभिन्न परिस्थितियों जैसे– सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि की नींव है। धर्म में विभिन्न कट्टरता भी दिखाई देती है। धर्म के अनुसार व्यक्ति का मार्गदर्शन होता है। विवेकानन्द ने धर्म को व्यक्ति की जरुरत माना है। अतः इन्होंने उन्हीं वस्तुओं को जीवन जीने के लिए आवश्यक माना है जो व्यक्ति जीवन एवं भौतिक जीवन की पूर्ति कर सके। लेकिन अगर भौतिक जीवन की पूर्ति न हो सके तो वहां धर्म ही आन्तरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

धर्म, विवेकानन्द की दृष्टि से एक आन्तरिक शक्ति थी। वे कहते हैं कि– "मेरे धर्म का सार शक्ति है जो धर्म ह्रदय में शक्ति का वास नहीं करता वह मेरी दृष्टि से धर्म नहीं है। शक्ति धर्म से भी बड़ी वस्तु और शक्ति से बढ़कर कुछ भी नहीं है।" विवेकानन्द के अनुसार– मानव जाति के भाग्य निर्माण में विभिन्न शक्तियों का सहयोग है और दे रही है। उन सब में धर्म के रुप में प्रकट होने वाली शक्ति से अधिक कोई महत्वपूर्ण नहीं है। इन्होंने धर्म को सामाजिक संगठन और सहयोग की मौलिक शक्ति माना है।

ऐतिहासिक काल के पूर्व के केवल तीन धर्म आज भी संसार में देखने को मिल जाते हैं। हिन्दू धर्म, पारसी धर्म और यहूदी धर्म। ये धर्म आज भी जीवित हैं। विवेकानन्द का मानना है कि ये सभी धर्म हिन्दू धर्म की जन्मदात्री हैं। सभी धर्म हिन्दू धर्म से ही उत्पन्न हुए हैं। धर्म के सार और वास्तविकता को स्वामी विवेकानन्द ने इन शब्दों में प्रस्तुत किया। प्रत्येक आत्मा ही ब्रह्मा है। एक आत्मा का दूसरी आत्मा के साथ और प्रत्येक आत्मा का परम पिता परमात्मा के साथ जो नैतिक और दिव्य आध्यात्मिक सम्बन्ध है, वे हमसे पूर्व भी और बाद में भी बने रहेंगे। विवेकानन्द विभिन्न कुरीतियों के विरोधी थे। वे धर्म में रूढ़िवादिता को समाप्त करना चाहते थे। धर्म अंधविश्वास में आता है जिसमें तर्क का कोई महत्व नहीं। विवेकानन्द ऐसी ही धारणा को समाप्त करना चाहते थे। उन्होंने धर्म को भी विज्ञान की संज्ञा दी।

रवींद्रनाथ टैगोर ने हिन्दू धर्म के लौकिक और आध्यात्मिक पक्ष के समन्वय की तुलना एक बरगद के वृक्ष से की है, जिसकी जड़ें इस लोक में गहराई तक जाती हैं और जिसकी चोटी परलोक तक पहुंचती है। वे कहते हैं कि 'भारतीय धर्म पूरे समाज के लिए है। इसकी जड़े पृथ्वी में बहुत गहराई तक जाती है। किन्तु इसकी चोटी आकाश को छूती है। भारत ने चोटी की संकल्पना जड़ से अलग नहीं की है। एक बरगद के वृक्ष के समान हिन्दू धर्म मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन को ढके रहता है।

बंकिमचन्द्र और विवेकानन्द ने इहलौकिक उद्देश्यों के लिए धर्म के इस्तेमाल पर जोर दिया और कहा कि धर्म को मनुष्य की भौतिक समस्याओं का समाधान पेश करना चाहिए। विवेकानन्द ने एक बार कहा था, "तुम्हारी भक्ति और मुक्ति की परवाह किसे है, कौन इसकी परवाह करता है कि तुम्हारे धर्मग्रंथ क्या कहते हैं? मैं बड़ी खुशी से हजार बार नरक जाने को तैयार हूँ, अगर इससे मैं अपने देशवासियों को ऊंचा उठा सकूं।"

मदनमोहन मालवीय और महात्मा गाँधी व अन्य के मध्य चर्चा के समय मदनमोहन मालवीय ने पूछा– बापू आपकी दृष्टि के धर्म क्या हैं? तब गाँधी बोले मेरी दृष्टि से धर्म का अर्थ कर्त्तव्य है। समाज के हर व्यक्ति का अलग धर्म है, सैनिक का धर्म अपने राष्ट्र व समाज की रक्षा करना, भले ही अपने प्राण चले जाए। वही एक व्यापारी का धर्म पूरी ईमानदारी से उपभोक्ताओं के आवश्यक वस्तुऐं उपलब्ध करना है। तो एक न्यायाधीश का धर्म पूरी ईमानदारी से निष्पक्ष रहकर सभी को न्याय दिलाना है। इसलिए वह निष्पक्ष रहकर सभी को न्याय देता है। एक राजा का धर्म पूरी ईमानदारी से प्रजा की सेवा करना होता है, तो प्रजा का धर्म राजा पर पूरी निष्ठा के साथ विश्वास पात्र करना होता है। गाँधी के मुँह से धर्म संबंधित विचारों की ऐसी बातें सुनकर सभी अचंभित रह गए।

"मेरे धर्म सत्य और अहिंसा पर आधारित है। सत्य मेरा भगवान है, अहिंसा उसे साकार करने का साधन है।"

"धर्म जीवन की तुलना में अधिक है, याद करे कि उसका अपना धर्म ही परम सत्य है। हर मनुष्य के लिए भले ही दार्शनिक मान्यताओं के माप में किसी नीचे स्तर पर हो। सभी धर्मों का सार एक ही है, केवल उनकी पद्धतियां अलग है।"

"मेरा धर्म मुझे सिखाता है कि जब कोई संकट हो जिसे हम दूर नहीं कर सकते हो तब हमें व्रत और प्रार्थना करनी चाहिए।"

रुप धर्म इतनी सरल वस्तु है, जैसे कि कपड़े जिसे एक मनुष्य बदल सकता है। अपनी इच्छानुसार और पहन सकता है, इच्छानुसार। धर्म ऐसा है जिसके लिए लोग पूरी–पूरी उम्र जीते हैं।

मैक्स वेबर ने लिखा है कि– "हिन्दू धर्म दरअसल जादू, अंधविश्वास और अध्यात्मवाद की खिचड़ी है।"

धर्म जीवन की अलौकिक आस्था एवं सर्वोच्च सत्य को जानने की अभिप्सा, सभ्यता और संस्कृति के नये–नये सोपान रचना और आचरण संहिता का सृजन कर समाज के सभ्य तरीके से संचालित करने का क्रम आरम्भ हुआ। भौतिक उपलब्धियों का सुख उसे अधिक समय तक बांधे नहीं रख सका, फलतः भौतिकता से इतर परमार्थ के धरातक पर हुछ आध्यात्मिक चिन्तन की धारा फूटी और विस्तृत हुई। इस आध्यात्मिक चिन्तन का लक्ष्य था शाश्वत सुख की प्राप्ति और परम सत्ता का दर्शन लाभ। चिन्तन की यह धारा समाज को वैयक्तिक स्तर से ऊपर उठाकर निर्वैयक्तिक तथा बहुजन हिताय बहुजन सद्भाव सहनशीलता का व्यवहार करने का मार्गदर्शन करने लगी। परम सत्ता को सर्वकालिक सर्वजनीन और सार्वभौमिक कहकर आधारभूत मान्यता स्थापित की गई। यही था मानव धर्म को उस कालखंड में सामाजिक स्वीकार्यता भी प्राप्त हुई।

स्वामी विवेकानन्द धर्म और आध्यात्म में वेदान्त दर्शन को स्वीकारते हैं। वेदान्त में मानव मन की सर्वोच्च ईश्वर धारणा सच्चिदानन्द नाम से निदिष्ट की गई। हम बहुत दिनों से ही उस सच्चिदानन्द स्वरुप की आन्तरिक वाणी को दबा

रखने की चेष्टा करते आये हैं। हम नियम का अनुसरण करने की चेष्टा करके अपने स्वाभाविक मनुष्य प्रकृति की स्फूर्ति में बाधा देने का प्रयास कर रहे हैं।

इनका नाम आध्यात्मिक क्षेत्र के लिए अविस्मरणीय है। वह प्रथम आध्यात्मिक सन्त थे, जिन्होंने जन साधारण के हित में प्रयत्नशील आवाज उठाई। उन्होंने गरीबी के लिए राष्ट्रीय जागरुकता उत्पन्न की। इनका मानना था कि प्राचीन आध्यात्मिक संस्कृति की देन अर्थात् वेदान्त में है।

सुभाषचन्द्र बोस कहते हैं– "स्वामी विवेकानन्द को आधुनिक राष्ट्रवादी आन्दोलन का आध्यात्मिक जनक कहा जा सकता है।"

विवेकानन्द का मानना था कि आध्यात्मिकता से ही सभी दुःख दूर हो सकते हैं। अन्य विषय से केवल और राहत ही प्राप्त हो सकती है। उन्होंने युवाओं में आध्यात्मिकता और राष्ट्रीय के प्रति भाव को उत्पन्न किया। वे राष्ट्रीय के सभी कार्य भारत के आध्यात्मिकता की नींव पर करना चाहते थे। क्योंकि उनका विचार था कि भारत के पास एक अतुलनीय आध्यात्मिक धरोहर है, जिससे भारत विकसित हो सकता है। शिक्षा का स्वरुप आध्यात्मिक व धार्मिक है। विवेकानन्द ने स्त्री के बारे में कहा कि– हिन्दू स्त्रियां बहुत ही आध्यात्मिक व धार्मिक होती हैं। आध्यात्मिक का उदस ठोस और सबल पृष्ठभूमि की देन थी और उसका चिन्तन से विकास हुआ। अध्यात्म में मुख्य बिन्दु है। जीव विकास विज्ञान अर्थात्– तत्वमीमांसा स्वयं ही अपनी शक्ति अधिकार में ही है। दूसरा इसका बिन्दू है ज्ञान मीमांसा अर्थात्– मनुष्य का मस्तिष्क निश्चित रुप से क्या–क्या समझ सकता है, यह इसमें आते हैं।

विवेकानन्द शिक्षा को व्यक्ति और समाज के लिए महत्वपूर्ण मानते थे। वे कहते थे कि इससे ही समाज और व्यक्ति के विभिन्न पहलू में परिवर्तन आ सकता है। आध्यात्मिक ज्ञान में अध्ययन, मनन, ध्यान, योग भी आते हैं। इनका विचार था कि भौतिकता और आध्यात्मिकता मूल्यों के बीच सन्तुलन बना रहे। स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि से समाज का पुर्ननिर्माण आध्यात्मिक मूल्यों के द्वारा ही सम्भव है। आध्यात्मिक मूल्यों का लक्ष्य स्व को प्राप्त करना अर्थात् आत्म साक्षात्कार करना। आत्म साक्षात्कार मुक्ति है। ये मनुष्य के लिए लक्ष्य है, उस लक्ष्य के लिए शिक्षा का योगदान महत्वपूर्ण रहता है, जिसके बिना हमारी विभिन्न स्थितियां जैसे– व्यवसायिक, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक उपलब्धियां अर्थहीन होंगी।

हिन्दू धर्म की आधारशिला उसकी आध्यात्मिकता है। कालान्तर में आध्यात्मिक राष्ट्रवाद की महान विभूति का नाम विवेकानन्द है। उनके गुरु रामकृष्ण परमहंस ने उनके बारे में पहले ही भविष्यवाणी कर दी थी कि– नरेन्द्र अपनी आध्यात्मिक एवं बौद्धिक प्रतिभा से विश्व की मौलिक आधारशिला को स्पंदित कर देगा और वह आध्यात्मिक गुरु के रुप में विकसित जन्मजात प्रतिभा को सदैव अपनी मातृभूमि भारत से अनुराग रखेगा। उनकी शिक्षा का व्यक्तित्व निर्माण करने के लिए कहा कि– "राष्ट्रीय शिक्षा पर हमारा नियंत्रण होना चाहिए वह आध्यात्मिक हो या सांसारिक हो।"

विवेकानन्द का यह मानना था कि ईश्वर से प्रेम करना कोई गलत बात नहीं और केवल प्रेम से प्रेम करना, इससे अच्छी बात और क्या होगी। हिन्दू धर्म साक्षात्कार है। ये मूर्ति–पूजा में विश्वास रखते थे। प्रत्येक धर्म में अपने विचार, दर्शन, पुराण, कर्मकाण्ड आदि हैं। सबका अपना महत्व है तथा सबका उद्देश्य एक ही है आत्मा की प्राप्ति करना। प्रत्येक व्यक्ति को अपने धर्म के लिए निष्ठावान रहना चाहिए। विवेकानन्द कहते थे कि– "जैसे विभिन्न नदियां भिन्न–भिन्न स्त्रोतों से निकलकर समुद्र में मिल जाती है, ठीक उसी प्रकार विभिन्न धर्म से जाने वाले लोग ईश्वर में ही विलिन हो जाते हैं।" उन्होंने शिकागो धर्म संसद में ये भी कहा कि अगर पश्चिमी और पूर्वी जगत का समन्वय दो महत्वपूर्ण स्थिति जैसे– आध्यात्म और तकनीकी को लेकर हो जाता है, तो भावी भारत सुनहेरा देश बन जायेगा।

वेदान्त आदर्श का उपदेश देता है और आदर्श वास्तविक की अपेक्षा कहीं अधिक उच्च होता है। हम लोगों के जीवन में दो प्रवृत्तियां देखी जाती हैं। एक है अपने आदर्श का सामंजस्य जीवन को करना, दूसरी है जीवन को आदर्श के अनुरुप उच्च बनाना। इन दोनों का भेद भली–भांति समझ लेना चाहिए। क्योंकि पहली प्रवृत्ति हमारे जीवन का एक प्रमुख प्रलोभन है। व्यवहार्य (Practical) शब्द को लेकर भी ऐसा ही अनर्थ होता रहता है। जिस बात को मैं कार्य रुप में परिणत करने योग्य समझता हूँ, जगत में एकमात्र वही व्यवहार्य है, ऐसी मेरी धारणा है।

वर्तमान में विवेकानन्द के धर्म व आध्यात्म की प्रासंगिकताः–

वर्तमान परिस्थितियों में जिस प्रकार समानता नहीं है और विभिन्न प्रकार के संघर्ष, समस्यायें उत्पन्न हो रही है, उन सबको देखते हुए आज विवेकानन्द के आत्म स्वात विचारों की आवश्यकता है। आधुनिक समय में स्वामी विवेकानन्द को वृहत्त परिप्रेक्ष्य में समझने की आवश्यकता है। उन्हें केवल धार्मिक नेता न मानकर राष्ट्रीय नेता माना जाये। वह दार्शनिक, संघर्षमयी महान महापुरुष थे। भारतीय संस्कृतिक चेतना के उन्नायक भारतीय नवजागरण के अग्रदूत स्वामी विवेकानन्द ने प्रेरणादाई ऊर्जा से परिपूर्ण जिन विचारों को तत्कालीन युवाओं के अन्दर आत्मसम्मान व आत्मविश्वास के भाव जगाने हेतु आह्वान रुप में व्यक्त किया था, वह वर्तमान समय में भी उतने ही प्रासंगिक प्रतीत होते हैं। स्वामी विवेकानन्द आधुनिक भारत के महान विचारण, चिन्तक, देशभक्त, दार्शनिक, युवा सन्यासी प्रेरणा के स्त्रोत और आदर्श व्यक्तित्व के धनी, युग परिवर्तक थे। युवाओं के लिए प्रेरणा स्त्रोत स्वामी विवेकानन्द ने कठोपनिषद का आह्वान किया।

"उतिष्ठ, जाग्रत उतिष्ठ, जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत्।"

अर्थात् उठो, जागो और तब तक मत रुको जब तक अपने लक्ष्य तक न पहुंच जाओ। कालान्तर में किकर्तव्यविमृढ़ मोह व अज्ञान से अकर्मण्य युवाओं हेतु किया गया। यह विचार आज भी अति प्रासंगिक है। आधुनिक परिवेश में स्वामी विवेकानन्द के विचारों की उपयुक्ता आज भी मानवता के लिए महत्वपूर्ण है। स्वामी विवेकानन्द भारत के अग्रदूत कहे गये हैं। उनके विशिष्ट विचार व कार्य उन तक ही सीमित नहीं रहे बल्कि आज भी विवेकानन्द के विचारों को उच्च कोटि तक ग्रहण किया जा रहा है।

स्वामी विवेकानन्द शिक्षा का रुप तकनीकी करना चाहते थे, जो आज के समय में व्यापक है। इसलिए उन्होंने मिशनरियों से कहा कि– हमें आपसे विज्ञान और टैक्नोलॉजी शिक्षा की आवश्यकता है। विवेकानन्द ने भारत में व्याप्त उन समस्याओं को देखा जैसे– जाति, भेदभाव, गरीबी, मजदूरी, स्त्रियों की हीन दशा, युवाओं की दशा व शिक्षा आदि के बारे में अपने समय में ही जान लिया। जो आज भी अहम मुद्दा युवाओं के लिए चुनौती भरा है। देश में समानता, युवाओं में आत्मविश्वास जगाना चाहते थे।

उन्होंने अपने जीवन में ही उद्योग–धंधे लगाने के सुझाव दिये जो आधुनिक में परिणाम देखने को मिलता है। विभिन्न स्कूल, कॉलेज खुलवाये। भारत वर्ष में विभिन्न समस्याओं में निवारण के लिए आधुनिक परिवेश में उनके विचारों पर चलने की आवश्यकता है।

संदर्भ सूचीः–

1. स्वामी, विवेकानन्द– धर्म रहस्य, रामकृष्ण मठ, नागपुर।
2. स्वामी, विवेकानन्द– धर्मतत्व, रामकृष्ण मठ, नागपुर।
3. स्वामी, विवेकानन्द– कर्मयोग, रामकृष्ण मठ, नागपुर।
4. Swami, Vivekananda– My India, The Eternal India, R.C. Mission, Kolkata
5. डॉ० वर्मा, वी०पी०– आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशक, 1971
6. टण्डन, एस०सी०– भारत के गौरव रत्न, पलक प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007
7. कुमार, अनिल– स्वामी विवेकानन्द, किताब घर, दिल्ली, 1975
8. डॉ० बेसेन्ट, ऐनी– दि लाइफ ऑफ स्वामी विवेकानन्द ईस्टर्न एण्ड वेस्टर्न डिसाइपिल्स, 1949
9. रोला, रोमा– विवेकानन्द की जीवनी, कोलकाता, 2013
10. डॉ० कुमार, किशोर– भारत में साम्प्रदायिकता, अतीत और वर्तमान, मुहिम प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, प्रथम संस्करण
11. जैन, यशपाल– राष्ट्र की विभूतियां, रस भारती प्रकाशन, मुरादाबाद, 1977
12. डॉ० मिश्र, आर०डी०– नव वेदान्त और स्वामी विवेकानन्द विद्यालय, प्रकाशन, सागर, 2005
13. प्रो० चन्द्र, बिपिन– भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, प्रथम संस्करण, 1990
14. शुक्ल, रामलखन– आधुनिक भारत का इतिहास, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली, 1997
15. प्रकाश, ओम– प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, विश्व प्रकाशन, 2001
16. झा, द्विजेन्द्र नारायण– श्री माली, कृष्ण मोहन, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली, 1984
17. wikipedia.internet